SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

कोविड 19– महामारी के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में संबंधों की संवेदना

भारती शर्मा, शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट (डीम्ड टू बी यूनीवर्सिटी), आगरा, उत्तरप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
भारती शर्मा, शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट
(डीम्ड टू बी यूनीवर्सिटी),
आगरा, उत्तरप्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 02/11/2022
Revised on : -----
Accepted on : 09/11/2022
Plagiarism : 01% on 02/11/2022

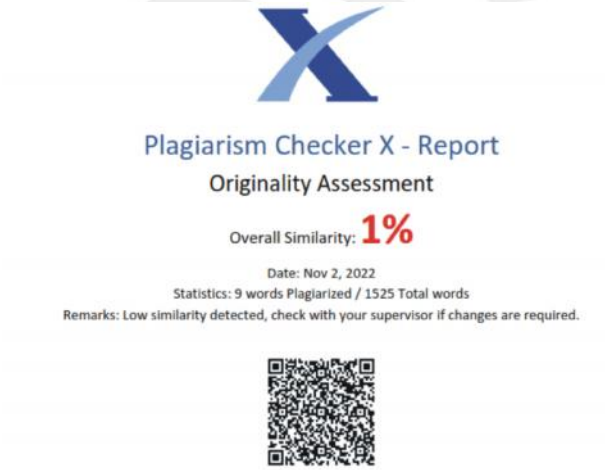

शोध सार

कोरोना वायरस एक वैश्विक महामारी के रूप में पूरे विश्व में फैली हुई है। इसने पूरे विश्व को अपने पंजों में जकड़ लिया है। इसका प्रभाव शिक्षा, अर्थव्यवस्था, पर्यावरण, समाज एवं परिवार आदि सभी क्षेत्रों पर पड़ा है। मानव इतिहास में पहली बार वैश्विक स्तर पर जन–धन के साथ–साथ मन की भी इतनी बड़ी हानि देखी जा सकती है। इस महामारी के दौरान सामाजिक, परिवारिक संबंधों में उनके स्वभाव एवं स्वरूप में अचूक परिवर्तन देखने को मिले हैं। इससे पहले शायद ही कभी हुआ होगा कि परिवार के सभी सदस्य घर में इतने लंबे समय तक एक साथ रह सके। आधुनिक भूमंडलीकरण के दौर में यह बहुत बड़ी बात है कि अपना कामकाज छोड़कर सभी को गांव की ओर भागना पड़ा। इस महामारी से सुरक्षित रहने के लिए लोग कई वर्षों बाद अपने गांव वापस जाकर अपने बड़े बुजुर्गों के साथ रहने लगे। इस समय मानवीय संबंधों पर दृष्टि डाली जाए तो इसमें संवेदनहीनता, वैचारिक अंतर तथा मूल्यहीनता दिखाई पड़ती है। यहां मानवीय मूल्य तार–तार हुए दिखते हैं जिसके कारण पारिवारिक कलह में वृद्धि हुई। इसमें जो लॉकडाउन हुआ उससे सामाजिक दूरियां ने न केवल मित्रों एवं रिश्तेदारों को दूर किया बल्कि माता–पिता और पुत्र–पुत्रियों के बीच भी दरार खड़ी कर दी। कुछ बड़े बुजुर्गों ने इस समस्या को गंभीरता से नहीं लिया और इस दौरान हुए आयोजनों जैसेः शादी, नामकरण, जन्मदिन, निमंत्रण आदि में परिवार के अन्य सदस्यों को शामिल होने के लिए जोर–जबरदस्ती की। उनका मानना था कि इस तरह से घर में घुसे कब तक बैठे रहेंगे, जिसको मरना है वह मरेगा, जिसकी अभी मृत्यु नहीं आई उसे कोरोना भी कुछ नहीं कर सकता। इसका विरोध कुछ शिक्षित युवाओं ने किया। उन्होंने सामाजिक दूरी, साफ–सफाई, हाथों को बार–बार धोना आदि को अपनाकर कोरोना से बचने के उपाय समझाने

की कोशिश की, किंतु वह नहीं माने। यदि वे कोरोना से संक्रमित हो भी गए तब भी वे इसे सामान्य बीमारी समझकर सामाजिक दूरी का उल्लंघन कर कहते रहे कि कुछ नहीं है यह सब जिसके फलस्वरूप छोटे बच्चे संक्रमित हुए और बहुतों को अपनी जान भी गंवानी पड़ी। वहीं दूसरी ओर घर के कुछ युवाओं ने अपने बड़े–बुजुर्गों को संक्रमित करने में कोई कसर नही छोड़ी। वे स्वयं घर में सुरक्षित रह कर बाहर के सारे काम बुजुर्गों से करवाते रहें। यदि बुजुर्ग बीमार हो जाते तो उन्हें अस्पताल में छोड़कर अलग हो जाते, फिर चाहे वे जिऐं या मरें। एक तरफ यह भी देखा गया कि परिवार के सभी सदस्य चाहे वह युवा हो या बुजुर्ग सभी एक दूसरे को कोरोना से सुरक्षित रखें इससे बचाव के सभी उपाय भी किये। यदि कोई संक्रमित हो भी जाए तो अपना ध्यान रखते हुए उसे संक्रमण से उभारे। इस प्रकार इस महामारी का पूरे विश्व में हानिकारक प्रभाव देखा जा सकता है। वहीं दूसरी ओर इसका सकारात्मक प्रभाव पर्यावरण संरक्षण एवं मनुष्य को आत्मनिर्भर बनने में देखा जा सकता है।

मुख्य शब्द

कोविड–19, महामारी, सामाजिक परिप्रेक्ष्य, संवेदना, लॉकडाउन, परिवार.

चूंकि समाज और साहित्य का गहरा संबंध है। इस कारण महामारी काल में साहित्य ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस दौरान लोग घर में बैठे–बैठे ऊब रहे थे तो उनका ध्यान अपने परिवार के साथ साथ मनोरंजन के लिए साहित्य की तरफ भी गया। साहित्य में उनकी रुचि बढ़ने लगी जिससे सुनकर या पढ़कर उन्हें अपने पर बीती बात सी लगने लगी। जैसे डॉक्टर सूरज सिंह नेगी के उपन्यास वसीयत में पिता विश्वनाथ विदेश बसे बेटे को दीपावली पर घर आकर परिवार के साथ यह त्यौहार मनाने के लिए कहता है तो बेटे ने यह कहकर फोन काट दिया– "क्या पापा आप भी बच्चों जैसी हरकतें करते हो। अरे मैं अपना हॉस्पिटल देखूं या आपकी खुशी में सम्मिलित होऊं।" इस महामारी के दौरान माता पिता की इस प्रकार की इच्छाएं पूरी हो पाईं और युवाओं द्वारा उनकी उपेक्षा करना भी कम हुआ। इस महामारी काल में देखा गया कि परिवार के सभी सदस्य एक साथ सभी त्यौहार घर में ही मनाने लगे जिससे उनके बीच प्रेम की सद्भावना बढ़ी। घर मकान छोटा हो या बड़ा वे सब एक लंबे समय तक एक साथ रहे।

इस महामारी के दौरान वृद्ध हो या युवा किसी का कुछ नहीं पता कि वह कितना जी एगा या कब तक जीवित रहेगा। हर व्यक्ति जीवन के अंतिम पड़ाव पर बहुत संवेदनशील हो जाता है। इस बात को वसीयत उपन्यास में भी उद्घाटित किया गया है– "उम्र के एक पड़ाव पर आकर इंसान को धन दौलत से अधिक प्रेम,स्नेह, अपनत्व एवं सम्मान की जरूरत होती है।" इस महामारी ने वृद्ध हो या युवा सभी को अंतिम पड़ाव का भय बिठा दिया जिससे वे आपस में सभी प्रकार के भेदभाव या रोष–क्रोध को छोड़कर मानवता का रिश्ता जोड़ने लगे, कि न जाने कब, कौन, कैसे इस संसार से नाता तोड़ तोड़ दे। कुछ इसी प्रकार की अभिव्यक्ति नेगी जी के उपन्यास ये कैसा रिश्ता में प्रकट किया गया है कि दृ"किसी स्थान, व्यक्ति, वातावरण के प्रति अपनेपन स्वीकारोक्ति का भाव ही इंसान को उसके नजदीक ले आता है और वह परायों को भी अपना बना लेता है।"

वहीं दूसरी तरफ इसके विपरीत जब नकारात्मक भाव आ जाता है तो अपने भी एक समय बाद पराए से लगने लगते हैं। जैसे नेगी जी के उपन्यास रिश्तों की आंच के पात्र रामप्रसाद की मां के साथ हुआ। उसके छोटे बेटे रमेश का स्वयं का अस्पताल होते हुए भी मां का इलाज फ्री में नहीं किया। उसने अपनी मां और भाई को पहचानकर भी अजनबियों जैसा बर्ताव किया– "कुछ देर बाद मेडिकल स्टोर से दवाई आ गई और साथ में एक हजार रुपए का बिल दुकानदार पकड़ा गया। बिल देख कर रामप्रसाद का माथा ठनका। स्वयं की गरीबी और भाई की बेदर्दी पर बहुत गुस्सा आया।"

लेकिन इस कोविड–19 महामारी में इस सब से ऊपर उठकर परोपकारी कार्य के लिए सभी सरकारी अस्पतालों में बिल्कुल फ्री या बहुत कम कीमत पर बहुत ही अच्छा इलाज किया जाने लगा। बीमारी चाहे कैसी भी हो, बहुत सटीक इलाज कर मरीजों को कम समय में स्वस्थ किए जाने की कोशिश होने लगी। सभी मरीजों को

अपना समझकर उसे शीघ्र स्वस्थ होने की सांत्वना अस्पताल के पूरे स्टाफ की तरफ से दी गई। नेगी जी के उपन्यास ये कैसा रिश्ता में कहा गया है कि "जीवन का असल मर्म समझना है तो जीवन और मौत से संघर्ष कर रहे अस्पताल में भर्ती मरीज से पूछ लेना चाहिए कि जो अपना सब कुछ देकर कुछ दिनों के लिए जीना चाहता है लेकिन उसकी ख्वाहिश कभी पूरी नहीं होती।" इस महामारी के दौरान डॉक्टर, पुलिसकर्मी, अन्य कर्मचारी एवं सामाजिक संस्थाओं के साथ–साथ धार्मिक स्थलों से जुड़े लोग आदि सभी समाज एवं राष्ट्रसेवा के लिए सहृदय आगे बढ़े। यह जानते हुए कि इस प्रकार की सेवा उनकी जान भी ले सकती है, फिर भी उन्होंने कर्तव्य निर्वहन सफलता से किया साथ ही उन्होंने मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता भी दी। यदि वे ऐसा न करते तो शायद इस महामारी से उभरना नामुमकिन सा होता। उनके लिए मानवीय प्रेम एवं दया करना ही सब कुछ रहा।

इसके दूसरी ओर यदि देखा जाए तो इस महामारी का नकारात्मक प्रभाव भी दिखाई दिया। इस महामारी के भय से कुछ मनुष्य इतने स्वार्थी हो गए कि वह पहले अपने बचाव की सोचने लगे और उनके सुरक्षित रहने के लिए किसी और को इस बीमारी से ग्रसित करना पड़े तो वे पीछे नहीं हटते। जैसे– कुछ युवा पीढ़ी अपनी पत्नी और बच्चों को सुरक्षित रखते हुए अपने माता–पिता को बाहर के सारे काम करने के लिए उन पर जोर देते रहे जैसे कि उम्र के अंतिम पड़ाव में उन्हें जीने का अधिकार ही न हो।

इस महामारी के दौरान बच्चे अपने माता पिता के अंतिम संस्कार के लिए भी न आ सके। इसमें लॉकडाउन प्रक्रिया अपनाई गई तो लोगों द्वारा आयोजन, समारोह एवं त्यौहार आदि सामाजिक कार्यक्रमों में एकत्रित होने पर प्रतिबंध लगाया गया, जिससे समाज के सभी व्यक्तियों में परस्पर सद्भाव और समभाव की भावना कमजोर होने लगी। इस प्रक्रिया में छोटे–छोटे बच्चे घरों में बंद रहे, तो जब इतने लंबे समय बाद घरों से बाहर निकले, समाज देखा तो बहुत डरे– डरे से, सहमे– सहमे से रहने लगे। अब उन्हें समाज में ढलने, बोलने – चालने में बहुत समस्याओं का सामना करना पड़ा।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कोविड–19 महामारी के समय में समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन देखे गए। इससे पहले इस तरह की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। इस महामारी काल में विदेश बसे व्यक्तियों को अपने–अपने देश में लौटना पड़ा और लॉकडाउन के दौरान जो नहीं लौट पाया, जहां है वहीं रह गया, ऐसे लोगों ने अपना एक नया समाज बनाया एवं नए रिश्ते बनाए। इस समय लोग शारीरिक रूप से तो प्रभावित हुए साथ ही मानसिक रूप से भी प्रभावित होने लगे।

इसका सकारात्मक प्रभाव यह भी देखा गया कि इस महामारी के दौरान व्यक्ति आत्म निर्भर होने लगा इससे पहले जो अपना काम स्वयं करने की सोचते भी नहीं थे उन्हें सभी काम स्वयं ही करने पड़े। फिर चाहे वह घर के काम हो या बाहर के।

संदर्भ सूची

1. नेगी सूरज सिंह, 'वसीयत', साहित्यगार प्रकाशक, 2018.
2. नेगी सूरज सिंह, 'रिश्तों की आंच', नवजीवन पब्लिकेशन, 2016.
3. नेगी सूरज सिंह, 'नियति चक्र', सनातन प्रकाशन, 2019.
4. नेगी सूरज सिंह, 'यह कैसा रिश्ता', हिंदी साहित्य निकेतन, 2020.
5. मीणा रमेश चंद, 'समकालीन विमर्श वादी उपन्यास', 2020.

****